PHILOSOPHY

Hons., Paper-VIII (Part-III)

Dr. S. K. Singh
Mob-943144

परतः प्रामाण्यवाद (न्याय) ~~वैशेषिक~~

→ न्याय दर्शन अपनी तत्वमीमांसा और ज्ञानमीमांसा में वस्तुवाद को स्वीकार करता है। तत्वमीमांसीय रूप में वस्तुवाद बाह्यजगत की यथार्थ सत्ता में विश्वास करता है। यही वस्तुवाद जब ज्ञानमीमांसा में प्रवेश करता है तो वह ज्ञाता और ज्ञेय के द्वैत को स्वीकार करता है। न्याय दर्शन अपनी इसी मान्यता के अनुरूप ज्ञाता से पृथक, स्वतंत्र बाह्य जगत के अस्तित्व एवं उसके वस्तुनिष्ठ ज्ञान को स्वीकार करता है।

→ न्याय मतानुसार ज्ञान कुछ बाह्य कारणों से उत्पन्न होता है और उसकी प्रामाणिकता का निर्धारण भी बाह्य कारणों पर ही निर्भर करता है। नैयायिकों के अनुसार जिन कारणों या साधनों से ज्ञान उत्पन्न होता है, उससे भिन्न कारणों या साधनों से ज्ञान की प्रामाणिकता एवं अप्रामाणिकता का निर्धारण होता है। नैयायिकों का यही मत परतःप्रामाण्यवाद ~~कहलाता~~ एवं परतःअप्रामाण्यवाद कहलाता है।

→ नैयायिकों के अनुसार ज्ञान अपनी उत्पत्ति के समय प्रामाणिकता एवं अप्रामाणिकता से रहित तटस्थ रूप में होता है। ज्ञानजनक सामग्री केवल ज्ञान को उत्पन्न करती है, उसकी प्रामाणिकता या अप्रामाणिकता को नहीं। दूसरे शब्दों में, ज्ञान अपनी उत्पत्ति के समय ~~ज्ञान-मात्र~~ ज्ञान-मात्र के रूप में होता है। ज्ञान की प्रामाणिकता और अप्रामाणिकता ज्ञान जनक सामग्री से भिन्न कुछ अन्य तथ्यों से उत्पन्न होती है। ये गुण ज्ञान को बाहर से, बाद में आते हैं। (घोष?)

→ न्याय मतानुसार इन्द्रियों का वस्तु से सन्निकर्ष होने पर सर्वप्रथम व्यवसायात्मक ज्ञान ~~घट ज्ञान~~ 'घट है'

उत्पन्न होता है। तत्पश्चात् अनुव्यवसायात्मक ज्ञान अर्थात् 'मैं इस घट को जानता हूँ', उत्पन्न होता है। परन्तु 'घट' संबंधी हमारा ज्ञान तभी प्रामाणिक माना जा सकता है, जब व्यवहार में आचरण करने पर उस घट में घट संबंधी मौलिक गुण पाये जायें; जैसे— 'पानी भर जाने' इत्यादि। इस प्रकार घट ज्ञान परीक्षण में सफल-प्रवृत्ति-सामर्थ्य होने पर उस ज्ञान के प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य दोनों ज्ञात होता है।

⇒ न्याय मतानुसार यथार्थता, प्रमा का स्वरूप है और इस यथार्थता के परीक्षण का साधन सफल-प्रवृत्ति-सामर्थ्य है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'प्रमा' का स्वरूप यथार्थता या तथ्य-अनुरूपता ही है, सफल-प्रवृत्ति-सामर्थ्य या उपयोगिता नहीं। न्याय दर्शन यहाँ केवल प्रमा की व्यावहारिक कसौटी के रूप में उपयोगिता को स्वीकार करता है। दूसरे शब्दों में, न्याय दर्शन प्रमा के स्वरूप के संबंध में वस्तुवादी है, जबकि उसकी यथार्थता के परीक्षण के संदर्भ में उपयोगितावादी है। यहाँ उपयोगिता को परीक्षण के साधन के रूप में स्वीकार किया गया है।

→ नैयायिकों का यह मत पाश्चात्य दर्शन के संवादिता सिद्धान्त (Correspondence theory) के समतुल्य है। सत्यता के स्वरूप के संबंध में दोनों में एकरूपता है।

→ मीमांसक इसके विपरीत परतः प्रामाण्यवाद स्वीकार करते हैं।

Scanned with CamScanner